HEGAL हीगल - के अधिकार सम्बन्धी विचार।

Hegal एक आदर्शवादी विचारक है। वह मानता है कि राज्य साध्य है और व्यक्ति साधन। इसी के अनुरूप उसके अधिकार सम्बन्धी विचार हैं। हीगल के अनुसार:

1. अधिकार राज्य के बाहर सम्भव नहीं है।
2. अधिकार मानवीय बुद्धि का आवश्यक परिणाम है।
3. मानवीय बुद्धि की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति राज्य के रूप में होती है।
4. अतः अधिकारों की प्राप्ति राज्य में ही सम्भव है।
5. अतः अधिकार केवल वही है जो राज्य द्वारा प्रदान किए जाते हैं।
6. किन्तु हीगल की व्याख्या कानूनी नहीं बल्कि दार्शनिक है।
7. राज्य विश्वात्मा की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है अतः यह अधिकारों की भी सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है।
8. अतः व्यक्ति के अधिकार और राज्य में कोई अन्तर्विरोध नहीं है। दोनों एक ही हैं।
9. इस प्रकार अधिकार और कर्तव्य भी एक ही हैं। क्योंकि व्यक्ति का कर्तव्य है राज्य की आज्ञा का पालन करना।
10. व्यक्ति को विरोध का अधिकार नहीं है।

Dr. S. HUSAIN

10- राज्य विरुद्ध व्यक्ति के कोई अधिकार नहीं है

11- राज्य के ऊपर व्यक्ति के कोई अधिकार नहीं है।

12. राज्य सर्वोच्च सामाजिक नैतिकता है, और सामान्य इच्छा का सर्वोत्तम रूप है। इसलिए व्यक्ति के वास्तविक अधिकार और स्वतंत्रता राज्य के कानूनों के पालन में है।

इस प्रकार हीगल के राज्य सम्बन्धी विचार उसके [illegible] राज्य सम्बन्धी विचारों से सम्बद्ध हैं। हीगल के दर्शन में राज्य को असीम एवं अप्रतिम ऊँचाइयाँ प्रदान की गयी हैं। अतः राज्य के बाहर, राज्य के ऊपर और राज्य के विरुद्ध कोई अधिकार नहीं है। अधिकार की उपलब्धता में ही है, और राज्याज्ञा का पालन करना ही सच्ची स्वतंत्रता और अधिकार है।

Dr. S. HUSAIN

ग्रीन के अधिकार सम्बन्धी विचार ->

ग्रीन के अनुसार मनुष्य की अनुभूति स्वतंत्रता में समाहित है तथा स्वतंत्रता व्यक्ति अधिकारों द्वारा प्राप्त करता है। मानवीय जीवन में सुख अनुभूति है, और इस सुख को प्राप्त करने के लिए कुछ भौतिक बाहरी स्थितियों की आवश्यकता होती है। यही बाहरी या बाह्य परिस्थितियां अधिकार हैं। वस्तुतः अधिकार मनुष्य के विकास के आवश्यक बाह्य परिस्थितियां हैं। ग्रीन के शब्दों में "अधिकार व्यक्ति द्वारा अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने की शक्तियां हैं, जिन उद्देश्यों को वह अपने लिए हितकर समझता है तथा समाज व्यक्ति को यह अधिकार इस आधार पर प्रदान करता है कि इन अधिकारों के प्रयोग से समाज का हित भी सिद्ध होगा।" इस प्रकार ग्रीन अधिकारों को प्राकृतिक या स्वाभाविक न मानकर समाज द्वारा व्यक्ति को सामाजिक हित के लिए दी गई कुछ सुविधाएं मानता है जिन्हें समाज ने अपने कल्याण की दृष्टि से स्वीकार किया है। ग्रीन अधिकारों को दो तत्वों में प्रस्तुत करता है i- व्यक्ति अपनी [illegible] ऐसी आवश्यकता और [illegible] रूप में परिणत करने की मांग समाज से करता है जो अन्य व्यक्तियों की भी आवश्यकताएं होती हैं।

ii- समाज द्वारा इन मांगों को स्वीकार कर लेना।

इस प्रकार अधिकार के दो तत्व स्पष्ट होते हैं - (i) व्यक्ति की मांग और (ii) समाज द्वारा इन मांगों की सामाजिक स्वीकृति। परन्तु उल्लेखनीय है समाज उन्हीं मांगों को स्वीकार कर इन्हें अधिकार का रूप देता है जो समाज की मांगें होती हैं या सामाजिक होती हैं। ग्रीन ने अधिकार के इन दो तत्वों को अनिवार्य और अविभाज्य बताया है। ग्रीन के शब्दों में व्यक्ति अपनी चेतना के कारण सामान्य हित का ध्येय मानने की मांग करता है क्योंकि वह जानता है कि उसके हित में दूसरों का हित और दूसरों के हित में स्वयं उसका हित है। अतः व्यक्तियों

की सामान्य चेतना पर आधारित माँग को समाज की मुक्त स्वीकृति प्राप्त हो जाती है। समाज इस माँग की स्वीकृति प्रदान करके केवल यथार्थ रूप प्रदान करता है।" इसीलिए अधिकार वस्तुतः सामाजिक स्वीकृति है। यह मात्र व्यक्ति सामाजिक होने के कारण प्राप्त होते हैं। समाज से पृथक अधिकारों का कोई अस्तित्व नहीं है। समाज से ग्रीन की शिकायत कि व्यक्तियों को [illegible] अधिकार प्राप्त नहीं है जो उसके [illegible] रहे हैं। हैलोवेल के शब्दों में — "ग्रीन ने व्यक्ति के सभी आविच्छेद अधिकारों को एक ही अधिकार में परिवर्तित कर दिया है, यह समाज के सभी व्यक्तियों के हित के साथ सामंजस्य रखते हुए अपने वैयक्तिक हित का सम्पादन करता है।"

प्राकृतिक अधिकार → उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रीन की यह परिभाषा व्यक्तिवादियों व संविदावादियों की प्राकृतिक अधिकार की धारणा का, जिसमें व्यक्तियों के पास प्राग्-राज्य व्यवस्था में ही कुछ अधिकार व स्वतंत्रताएं परिकल्पित करती हैं।

ग्रीन अधिकार की इस मान्यता से प्रभावित रहा था कि 17वीं सदी की क्रान्तियों द्वारा अनुप्राणित स्वतंत्रता का सिद्धान्त एक निरर्थक प्रलाप है। ग्रीन के शब्दों में — "प्राकृतिक अधिकार अर्थात् एक ऐसा अधिकार जो कि समाजहीन प्राकृतिक अवस्था में पाया जाता है, शब्दों का परस्पर विरोध है।" Coker के शब्दों में ग्रीन ने प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धान्त का आधार इस कल्पना का खण्डन किया है कि मनुष्य व्यक्ति की कुछ स्वतंत्रता तथा अपने उपयोग की कुछ वस्तुओं में कुछ स्थापित स्वत्वों को लेकर जन्म लेता है। ..... ग्रीन इस बात को स्वीकार नहीं करता है कि समाज से पृथक और समाज से स्वतंत्र भी कोई अधिकार है।"

वास्तव में ग्रीन ने 17वीं सदी के प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धान्त का स्वरूप खण्डन करने के बावजूद प्राकृतिक अधिकारों को स्वीकार करते हैं। किन्तु ग्रीन प्राकृतिक

Dr. S. HUSAIN

प्राकृतिक अधिकार अर्थात समाज के समस्त सदस्य जीवन निर्वाह की जिन अनिवार्य व स्वाभाविक दशाओं या मांगों को अधिकार के रूप में स्वीकार करते हैं वे ही प्रा० अधिकार हैं।

अधिकार शब्द का प्रयोग दो अर्थों में करता है। इस प्रकार अरस्तू ने राज्य के लिए प्राकृतिक शब्द का प्रयोग किया है। ग्रीन प्राकृतिक अधिकार उन अधिकारों को कहता है जो कि मनुष्य को इसलिए मिलने चाहिए क्योंकि एक विवेकमय व नैतिक प्राणी होने के नाते उसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। इन अधिकारों को प्राकृतिक इसलिए कहा कि वे उस उद्देश्य के लिए आवश्यक हैं एवं उन्हें ऐसे साधन हैं जो कि मनुष्य के लिए स्वाभाविक है। Coker ने 'Recent Political Thought' में लिखा है कि — "प्राकृतिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनका उपभोग ~~विवेकपूर्ण ढंग से~~ साधारणतया एक विवेकमय तथा नैतिक मनुष्य द्वारा किया जाना चाहिए जो कि एक विवेकपूर्ण ढंग से स्थापित समाज में रहता है। वे केवल उन्हीं मनुष्यों के लिए होते हैं जिनमें कि सामान्य हित की धारणा से प्रभावित होने का सामर्थ्य होता है।"

आदर्श अधिकार -> ग्रीन प्राकृतिक अधिकारों को ही आदर्श अधिकार मानता है, ये वे अधिकार हैं जिन्हें संगठित समाज को सद्भावना के आधार पर अपने सदस्यों को प्रदान करना चाहिए। ये आदर्श अधिकार राज्य द्वारा स्वीकृत यथार्थ अधिकारों की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक और विस्तृत होते हैं। Barker के शब्दों में — "किसी समाज के वास्तविक कानून द्वारा प्रतिष्ठित यथार्थ अधिकार एक आदर्श प्रणाली के कभी अनुकूल नहीं होते।" प्राकृतिक अधिकार हमारे सामने ऐसा मापदण्ड उपस्थित करते हैं जिसके द्वारा हम यथार्थ अधिकारों को परख सकते हैं, वे एक आदर्श है जिसके अनुकूल यथार्थ अधिकारों को होना चाहिए।

प्राकृतिक अधिकार व यथार्थ अधिकार या विधिक अधिकार से इस अर्थ में भी अलग है कि यह ग्रीन अधिकारों की सामाजिक स्वीकृति की बात करता है तथा उसे समाज की नैतिक चेतना तथा मान्यता से

Dr. S. HUSAIN

होता है, कानून द्वारा मान्यता से नहीं। Sabine ने 'History of Political Thought' में लिखा है कि – "ग्रीन के लिए व्यक्तिगत दावे और सामाजिक स्वीकृति की यह पारस्परिक आत्मनिर्भरता एक न्यायिक संकल्पना नहीं, अपितु नैतिक धारणा थी। वह अधिकारों के सम्बन्ध में बेन्थम की इस परिभाषा को स्वीकार नहीं करता कि वे "वैधानिक सृष्टि हैं।" — Barker का कथन है कि – "अधिकारों का आधार केवल वैधानिक स्वीकृति नहीं है। यह सामाजिक नैतिक चेतना है। अधिकार विधान सापेक्ष न होकर नैतिकता से सम्बद्ध होते हैं। मनुष्य के नैतिक लक्ष्य की सिद्धि के लिए अधिकार आवश्यक शर्त है।"

<u>अधिकार और कानून</u> -> ग्रीन अधिकार व कानून में गहरा सम्बन्ध मानता है। अधिकार व कानून इस दृष्टि से परस्पर सम्बन्धित हैं कि अधिकार को कानूनी रूप दिया जा सकता है और इस प्रकार इसका पालन कराया जा सकता है। व्यक्ति के आध्यात्मिक बौद्धिक तथा नैतिक विकास के आवश्यक शिक्षा को ~~कानूनी~~ आवश्यकता को कानूनतन अनिवार्य कर दिया जाए तो यह कानूनी अधिकार हो जायगा। लेकिन कानून और अधिकार में अन्तर यह है कि सभी विधि सम्मत अधिकार नैतिक रूप से औचित्य पूर्ण नहीं हो सकते। विधि सम्मत अधिकारों में से कुछ अन्यायपूर्ण भी हो सकते हैं। इसी प्रकार कुछ अधिकार ऐसे भी होते हैं जो नैतिक तो ~~हैं~~ अवश्य होते हैं लेकिन वैधिक संरक्षण प्राप्त न होने के कारण कानून सिद्ध नहीं होते। ग्रीन के अनुसार नैतिक अधिकार ही कालान्तर में सामाजिक स्वीकृति के कारण कानूनी अधिकार का रूप ले लेते हैं।

<u>अधिकार और नैतिकता</u> -> कानून की भांति ही ग्रीन नैतिकता से भी अधिकार का गहरा सम्बन्ध स्वीकार करता है। नैतिकता के बिना जीवन व्यतीत करना सम्भव नहीं है। किन्तु इन दोनों में मौलिक भेद यह है कि अधिकारों का सम्बन्ध केवल बाह्य स्थितियों से होता है, जबकि नैतिकता मनुष्य के →

Dr. S. HUSAIN

अन्तर्विरोध भी स्पष्ट होते हैं। (i) ग्रीन कहीं कहता है कि राज्य नैतिकता पैदा नहीं कर सकता। और राज्य कानून का और व्यक्तियों को नैतिक बनाकर नैतिक कार्य हेतु बाध्य कर सकता है। कहीं यह घोषणा करता है कि व्यक्तियों को ऊपर से नैतिक नहीं बनाया जा सकता क्योंकि यह उसके अन्तःकरण का विषय है। Sabine के शब्दों में — "कानून मनुष्य को नैतिक बनाने का प्रयास नहीं कर सकता है। इसका कारण यह है कि नैतिकता का सम्बन्ध चरित्र से है और चरित्र का निर्माण कानून के दबाव से नहीं किया जा सकता है। कानून का सम्बन्ध अनिवार्यतः मनुष्य के बाह्य आचरण से होता है। उसकी आन्तरिक भावना या इच्छा से नहीं।"

समीक्षा → Lancaster ने 'Masters of Political Thought' में ग्रीन के इस सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहा है कि "उसने दो विरोधी सिद्धान्तों के समन्वय का असफल प्रयास किया है।" एक ओर तो वह प्रबल व्यक्तिवादी है, वह राज्य द्वारा किए अनिवार्य कार्यों का समर्थन इसी आधार पर करता है कि वे वैयक्तिक विकास में सहायक होंगे। दूसरी ओर वह राज्य के विरुद्ध अधिकार को व्यक्ति को नहीं प्रदान करता। (i) मनुष्य को स्वभावतः नैतिक और विवेकशील प्राणी नहीं माना जा सकता। (ii) ग्रीन इस बात का भी कोई उत्तर नहीं दे पाया कि इस बात का निर्णय कौन करेगा कि समाज में नागरिकों के प्राकृतिक या आदर्श अधिकार क्या होंगे? क्योंकि ज्यों-ज्यों अधिनायकवादी राज्य की अवधारणा विकसित होती रही है त्यों-त्यों व्यक्तियों के अधिकार सीमित होते गए हैं।

यद्यपि उपर्युक्त सन्देहों में सत्यांश है लेकिन इन आपत्तियों से ग्रीन की वह महान देन कम नहीं हो जाती जो कि उसने इंग्लैण्ड के राजनीतिक दर्शन के उदारवादी चिन्तन में संशोधन करके दी है। संक्षेप में इस सिद्धान्त का समर्थन Barker के इस कथन से किया जा सकता है — "समाज में एक ऐसी नैतिक प्रणाली रहती है जो कि राज्य से स्वाधीन होती है और जो व्यक्ति को एक ऐसी कसौटी देती है जिससे वह स्वयं →

प को भी परख कर सकता है।" वास्तव में ग्रीन की सांविध
पारम्परिक प्राकृतिक अधिकार तथा उपयोगितावादि
अधिकारों का स्रोत एक सर्वोच्च प्रभु है — के नैसर्गवादियों का
के जिस प्रकार सामाजिक आवश्यकता को अधिकार
ा दी है वह वास्तव में उसकी एक महान देन है।
क्तिवादी और समाजवादी तत्व अत्यधिक
ुता से समाविष्ट है।

—— ∞ ——

अधिकार पर लास्की के विचार ·

लास्की एक बहुलवादी विचारक हैं। इसी के अनुरूप उनके अधिकार सम्बन्धी विचार हैं। वे अधिकार को मानवीय जीवन के विकास की आवश्यक बाह्य दशाएं मानते हैं। उन्हीं के शब्दों में — "अधिकार सामाजिक जीवन की वे दशाएँ हैं जिनके बिना कोई भी अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता।" — लेकिन अधिकार आवश्यक मानने के बाद भी लास्की अधिकारों को प्रतिबन्धों के बिना नहीं मानते। उनकी मान्यता है कि एक व्यक्ति के अधिकार दूसरे व्यक्ति के इसी प्रकार के अधिकार के साथ जुड़े हैं, अतः दोनों एक दूसरे पर प्रतिबंध हैं। इसीलिए लास्की को अधिकारों के सकारात्मक सिद्धांत का व्याख्याता माना जाता है।

लास्की ने अधिकारों के नकारात्मक और प्राकृतिक सिद्धांत की आलोचना की। उनके अनुसार ऐसे कोई अधिकार जो व्यक्ति को जन्म से प्राप्त हो या अपरिवर्तनशील हों। इसी प्रकार वैधिक सिद्धांत की भी आलोचना की और कहा कि अधिकारों का केवल कानूनी चरित्र नहीं होता। उनके पीछे समाज, अन्य व्यक्तियां भी होती हैं। यह विचार उनके बहुलवाद के विचार के अनुरूप हैं।

Dr. S. HUSAIN

(2)

लास्की के अनुसार अधिकार की विशेषताएँ-

1- अधिकार आवश्यक बाह्य परिस्थितियाँ हैं।
2- अधिकार व्यक्तित्व के विकासार्थ आवश्यक है।
3- अधिकार के साथ कर्तव्य अनिवार्य रूप से जुड़े हैं।
4- अधिकार सभी मनुष्यों के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण होते हैं।
5- अधिकार मनुष्यों की न्यायोचित माँगें होती हैं।
6- लोगों के अधिकार आपस में जुड़े होते हैं।
7- अधिकारों पर उचित प्रकार के प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं।
8- अधिकारों की उपलब्धता से ही राज्य के अच्छे या बुरे होने की पहचान होती है।

लास्की ने काम का अधिकार, श्रम का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, विरोध का अधिकार, विचाराभिव्यक्ति का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, मत देने एवं निर्वाचित होने के अधिकार आदि को महत्वपूर्ण माना है।

मूल्यांकन - लास्की का अधिकार का सिद्धांत वास्तव में इसके बहुलवादी विचारों और लोककल्याणकारी राज्य के विचारों के अनुरूप ही है। यह अधिकारों एवं समाज दोनों में संतुलन स्थापित करता है।

Dr. S. HUSAIN

अधिकार पर हाबहाउस Hobhouse के विचार → Elements of Social

Justice इनकी महत्वपूर्ण रचना है। हाबहाउस भी लास्की की ही भांति "कल्याणकारी राज्य" की अवधारणा के चिंतक हैं। उनका अधिकार सम्बन्धी विचार भी इसी के अनुरूप है।

हाबहाउस के अनुसार भी अधिकार "आवश्यक बाह्य दशाएँ" हैं। इन बाह्य परिस्थितियों के बिना व्यक्ति अपनी स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग नहीं कर सकता। वह कांट, ग्रीन आदि के इस मत को स्वीकार करते हैं कि "वैयक्तिक हित अर्थात् सार्वजनिक हित से जुड़ा है" - इस प्रकार एक व्यक्ति का अधिकार दूसरे के इसी प्रकार के अधिकार से जुड़ा है, जैसाकि लास्की भी कहते हैं। अतः अपने सकारात्मक रूप में अधिकार सम्भवतः व्यक्ति की अपनी इच्छा की अभिव्यक्ति (व्यक्तिगत अधिकार) आवश्यक है लेकिन यह सार्वजनिक हित के साथ अनिवार्य रूप से सम्बद्ध है।

हाबहाउस के मतानुसार राज्य का कार्य है "इन आवश्यक बाह्य दशाओं" को उपलब्ध कराना। वास्तव में राज्य का यही प्रमुख कार्य है कि वह अधिकार अर्थात् आवश्यक बाह्य दशाओं को उपलब्ध कराए और उनकी रक्षा करे।

Dr. S. HUSAIN